International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 23-10-2020; Accepted: 08-11-2020; Published: 28-11-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 6; 2020; Page No. 68-69

भैरव प्रसाद गुप्त : सृजन की वैचारिकी

डॉ0 रंजना त्रिपाठी
श्री मुरली मनोहर टाउन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बलिया, मध्य प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

सृजन की उत्प्रेरणा शक्ति ही साहित्य का जीवन दर्शन होता है। जीवन दर्शन साहित्यकार की एकान्तिक रचना प्रक्रिया है, यह रचनाकार का श्रेय, प्रेय तथा पाथेय होता है जिससे वह अपने विशिष्ट रचना शिल्प को विनिर्मित करता है। भैरव प्रसाद गुप्त इसके अपवाद नहीं हैं। भैरव प्रसाद गुप्त सृजन संघर्ष की निरन्तरता के प्रतीक हैं। भैरव प्रसाद गुप्त जी का सृजन संघर्ष के दो स्तरों पर निरन्तरता में होता है प्रथम आत्म संघर्ष तथा द ूसरा समाज–स ंघर्ष। सामाजिक संघर्ष को गुप्त जी अपनी विशिष्ट शिल्प भाषा में बार–बार संयोग का नाम देते हैं। गुप्त जी स्वयं कहते हैं ''मै संयोग पर बार–बार इसीलिए जोर दे रहा हूँ कि यह जो हमारा समाज है आपकी कोइ ं भी योजना नहीं चलन ` देगा। कुछ योजना बनती हैं और उसको नष्ट कर देती हैं। इसीलिए हमारी आपकी योजना को कौन पूछता है? बाह्य परिवेश की नकारात्मकता स्वतंत्र आन्तरिक जगत को प्रताड़ित करने का प्रयास करती है। यह समाज के मूल या नैसर्गिक प्रवाह को अपने अनुसार संचालित करती है। यहीं सामाजिक अपदूषण का प्रारम्भ होता है, परिणामस्वरूप समाज का जनसामान्य सामाजिकता के निर्माण में अपनी सहभागिता नहीं निभाता है और जिन्ह ं समाज की सामाजिकता से लेना देना नहीं होता वे समाज के संचालक बन जाते है ं।1

गुप्त जी सृजन की व्यक्तिगत अन ुभूतियों को बृहत्तर समाज तक जाने की एक एकान्तिक प्रक्रिया मानते हैं। गुप्त जी रचना धर्मिता को अन्तस जगत की चेतना यात्रा मानते हैं परन्तु वह मात्र आत्मगत नही ं प्रत्य ुत वस्तुगत है। यहाँ भैरव प्रसाद गुप्त जी का मार्क्स के द्वन्द्व के प्रति अगाध आस्था सतह पर आ जाती है। वह स्वयम् सृजन एवं परिवेश के परिसंवाद में बोल पड़ते हैं। सृजन एक एकान्तिक क्रिया है और रचनाकार एकदम अकेला होता है तो उसे बैठकर करता है। उसके पास केवल अपना ज्ञान और अनुभव होता है। भाषा ज्ञान होता है, उसने जो कुछ भी अध्ययन किया है, उससे प्राप्त ज्ञान होता है और कुछ नहीं होता है, उसके पास। वह हवा में बैठता है और उसके चारों तरफ हवा होती है। उसके सामन हवा में विचार कौंधते हैं। किन विचारों को वह कैसे पकड़े और किस विचार को वह पकड़े और किसे लिपिबद्ध करे यह उसका काम है।

गुप्त जी के अनुसार जब अन्तस का साहित्यकार अपनी चैतन्यता में आता है

तो वह सृजन यात्रा पर स्वयम् निकल पड़ता है। यह स्वतः और अचानक होता है

इसके लिए किसी योजना की आवश्यकता नहीं होती है, यह अन्तस की नैसर्गिक प्रक्रिया है। जैसे गुप्त जी की वैचारिक अन्तः सलिला स्वतः प्रवाहित होने लगती है।

लेकिन इस प्रवाह में नदी के स्थूल शरीर एवं पानी की भांति विचार एवं शब्दों की संघर्ष की निरन्तरता चलती रहती है।2

इस प्रकार यह संघर्ष रचना और रचनाकार के मध्य चलता है। एक द्वन्द्वात्मक संघर्ष लगातार चलता रहता है जब तक कि रचना पूरी न हो जाय, कहानी पूरी हो न जाय, उपन्यास पूरा न हो जाय, कविता पूरी न हो जाय। कोई भी रचनाकार उसके साथ मनमानापन नहीं कर सकता। क्योंकि जब वह अस्तित्व में आ जाती है तो वह अपनी भूमिका वह खुद ही अदा करने लगती है। वह अपना नेतृत्व भी करती है। आपका मार्गदर्शन भी करती है कि भैरव अब इधर चलो, वहाँ–कहाँ भटक रहे हो? यह रास्ता है न, इस रास्ते पर चलो। बातें तो जोड़ी जाती हैं; आइडियाज आते–जाते रहते हैं, विचार आते–जाते रहते हैं और लिपिबद्ध होते रहते हैं। यह किसी मशीन का काम है? कोई मशीन कर सकती है क्या इसको? तो रचना यह है और रचना इस तरह होती है।3

गुप्त जी के रचनाकार व्यक्तित्व के निर्माण म ें उनके शैशवास्था से लेकर रचनाकार तक अर्थात् आरम्भ से अन्त तक परिवेश एवं पर्यावरण ने उन्हें गहरे रूप से अनुप्रेरित किया। प्रारम्भ से रचनाकार व्यक्तित्व तक की निर्माण यात्रा में गुप्त जी निरन्तर विचार यात्रा और सामाजिक अन ुशीलन करत ` हैं। गुप्त जी का लेखन अपने गांव सिवान–कला सिकन्दरपुर बलिया उत्तर–प्रदेश से होता है जब वह जूनियर हाईस्कूल सिकन्दरपुर में अध्ययन कर रहे थे।

परिवार ममता का मनोरम मंदिर होता है। माँ उसकी प्रथम पाठशाला होती है। माता–पिता के स्न ेहिल स ंरक्षण में शिशु के वैचारिक क्षितिज का निर्माण होता है। तद्उपरान्त घर से निकलने वाले शिशु के लिए प्राथमिकशाला या जूनियर हाईस्कूल के प्रथमतः शिक्षा देने वाले प्राध्यापकों का बालमन पर गहरा प्रभाव पड़ता है जो जीवन पर्यन्त बना रहता है। जिसे स्वंयम गुप्त जी स्वीकार रकत ` हैं।

प्राइमरी स्कूल में मेरी जो पढ़ाई शुरू हुई वह लगातार चलती रही। वे मेरे प्रारम्भिक शिक्षा के दिन थे और उन दिनों की बहुत सारी बातें याद हैं। कुछ मेरी कहानी, कविता या उपन्यासों में उन दिनों का जिक्र आया है, अपने अध्यापकों के बारें में कुछ लिखा है। लेकिन यहाँ एक बात का मैं जरूर जिक्र करूँगा। जीवन शायद अपना सपना बचपन में ही बुनने लगता है। एक बार आर्य समाजियों ने सम्पूर्ण प्रान्त में जूनियर हाई स्कूल स्तर पर एक निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया था, निबन्ध का विषय स्वामी दयानन्द सरस्वती था। मुझे पूरे प्रान्त में प्रथम स्थान प्राप्त हुआ। मुझे क्या खुशी होती। वास्तविक प्रसन्नता मेरे अध्यापक को हुई।

हमारे वे अध्यापक इतने प्रसन्न हुए कि जिस दिन आर्य प्रतिनिधि सभा आगरा से सूचना आई कि मुझे पुरस्कार मिला है तो उन्होंन कक्षा म ें ही गोद में उठा लिया और सब लड़कों के सामने कहा देखो! यह मेरा लड़का है, जो मेरा नाम उज्ज्वल करेगा भविष्य में। साहित्य में रुचि पैदा होने का जहाँ सवाल है ये उन्हीं दिनों हुआ और उन्हीं – अध्यापक से। बाबू रघुनाथ राय उनका नाम था। वो हमार ` गांव के पास सीसोटार गांव के थे। उनका व्यक्तित्व बड़ा सुन्दर था। बहुत ही गौर वर्ण के थे वे। शरीर बहुत ही सुडौल था, बाल घुंघराले थे, आंखे बहुत बड़ी–बड़ी थीं। वे केवल हिन्दी पढ ात ` थे। साहित्य में उनकी इतनी गहरी

दिलचस्पी थी कि वे हमेशा जैसे साहित्य गुनगुनाते रहते थे। साहित्य में जो रूचि पैदा हुई उसके लिए मैं जीवन भर उनका आभारी रहूँगा।4

किसी व्यक्ति का सामाजिक परिवेश या पर्यावरण उस व्यक्ति के रचनाकार को गहरे रूप में अनुप्राणित करता है। यद्यपि प्रारम्भ में भैरव प्रसाद गुप्त का परिवार सम्पन्न परिवार था। बाढ़ की विनाश लीला से पीड़ित गुप्त जी के पिता को अपने मूल गांव से विस्थापित होकर दूसरे गांव म` आना पड़ा। पुनः इस गांव सिवान–कला में जीवन की गाड़ी अपनी पटरी पर दौड़ पड़ी। विस्थापन की त्रासद कथा गुप्त जी अपने परिवारीजनों के मुख से सुन चुके थे। गुप्त जी का परिवार स्वतंत्रता के मुक्ति संग्राम में कांग्रेसी था फलतः परिवार ब्रिटिश प्रशासन का कोपभाजन हुआ तथा उस व्यापक आर्थिक अपहानि उठानी पड़ी। इस प्रकार परिवार आर्थिक स`क्रमण म` आ गया। आर्थिक सम्पन्नता से विपन्नता तक की आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया किसी परिवार के परिवर्तन क्रम में गहरे यथार्थबोध की अनुभूति करा द`ती है।

यह वह क्षण था जब गुप्त जी की आत्मपीड़ा से जन सामान्य की पीड़ा का सहज समीकरण समीकृत हो गया था – जो गुप्त जी के उपन्यासों की मूल उद्भावना बन गयी। 1942 के आन्दोलन के पश्चात गुप्त जी के बड़े भाई राधाकृष्ण गुप्त के भूमिगत होने के कारण परिवार पर अंग्रेजी सरकार के अत्याचार बढ़ गए।

उस समय गुप्त जी त्रिचनापल्ली में थे सारा परिवार बिखर गया। एक पुलिस टुकड़ी ने उनके मकान के सामने घेरा डाल दिया। दीवार पर नोटिस चिपका दी गयी कि अगर राधाकृष्ण पन्द्रह दिन के अन्दर हाजिर नहीं हुआ तो मकान कुर्क कर दिया जायेगा। माता–पिता तथा बड़े भाई ने हरदिया के मंदिर में शरण ली। मकान में केवल नौकरानी बटकी रह गयी थी जिस पर पुलिस बराबर जुल्म ढा रही थी।5

व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामाजिक त्रासदी के संरेख न` गुप्त जी की रचना धर्मिता में प्रशासनिक – राजनीतिक शोषण के विरूद्ध विद्रोही भाव का संचार किया। यह क्रान्तिकारी प्रवृत्ति गुप्त जी के रचना कर्म की मूल प्रकृति बन गयी। गुप्त जी का बाल मन सामाजिक अस्पृश्यता एवं विषमता से विछोह से भर उठता था। वह ऐस` समाज की परिकल्पना करते थे जिसमें किसी प्रकार की विषमता एवं शोषण न हो।

उन्हें यह बात अनन्त आशा का स`चार करती थी कि म`रे गांव के प्राथमिक विद्यालय में प्रत्य`क अध्यापक चाहे वह किसी जाति का हो प्रत्य`क विद्याथी` उसका चरण स्पश`करता था। यह समत्व भाव भैरव प्रसाद गुप्त के अन्तर्मन को अह्लादित करता था।

गांव के प्राइमरी स्कूल में मेरी पढ़ाई शुरू हुई वह लगातार चलती रही। वे मेरी प्रारम्भिक शिक्षा के दिन थे उन दिनों की बहुत सारी बातें याद हैं। कुछ मेरी कहानियों और कविताओं और उपन्यासों में उन दिनों का जिक्र आया है, अपने अध्यापकों के बारे में कुछ लिखा है। लेकिन यहाँ एक बात का मैं जिक्र अवश्य करूँगा। जीवन शायद अपना सपना बचपन में ही बुनने लगता है। अब यह अजीब बात है कि जब मैं पढ़ने लगा, तो देखता था कि गांव के जो लोग आत` थे, अभिभावक बच्चों के, वे अध्यापकों के पांव छूते थे, अध्यापक चाहे जिस बिरादरी का हो, वह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र भी हो सकता था, शूद्र भी उस वक्त अध्यापक होते थे।6

गुप्त जी का सामाजिक समत्व धर्म निरपेक्षता पर अवलम्बित था उसम` केवल व्यक्ति और उसकी गरिमा महत्वपूर्ण है न कि उस व्यक्ति की धार्मिक आस्था। गुप्त जी स्वयम् कहते हैं ''संयोग कुछ ऐसा हुआ कि मुझे एक मुसलमान लड़के से मिलने का अवसर मिला और उसकी मेरी दोस्ती हो गयी।। हमारे और उसके परिवार के स्तर में बहुत अन्तर था। वो हमारे गांव के जमींदार का लड़का था और हम बनिया के लड़के थे लेकिन, कुछ संयोग ऐसा हुआ कि खेल–खेल में ही हमारी उसकी गहरी मित्रता हो गई। यह नैसर्गिक एवं मानवीय प्रेम की प्रथम अनुभूति थी।7

संदर्भ सूची

1. सृजन और परिवेश – सम्पादक, सत्य प्रकाश मिश्र, पृष्ठ संख्या – 30
2. सृजन एवं परिवेश, सम्पादक, सत्यप्रकाश मिश्र पृ० सं 24
3. सृजन और परिवेश, सम्पादक, सत्य प्रकाश मिश्र, पृष्ठ सं. 26
4. भैरव प्रसाद गुप्तः व्यक्तित्व और रचनाकार विद्याधर शुक्ल पृ० सं. 17
5. भैरव प्रसाद गुप्तः व्यक्ति और रचनाकार, सम्पादक – विद्याधर शुक्ल
6. मेरी साहित्य यात्रा – भैरव प्रसाद गुप्त, ''लेखन'' पत्रिका – भैरव प्रसाद
7. गुप्त व्यक्ति और रचनाकार सम्पादक – विद्याधर शुक्ल, पृ.सं. 15
8. मेरी साहित्य यात्रा – भैरव प्रसाद गुप्त, ''भैरव प्रसाद गुप्त व्यक्ति और
9. रचनाकार'', सम्पादक – विद्याधर शुक्ल, पृ.सं. 14